प्रस्तावना

"क़िब्ला वालों की यह पुकार" मुसलमान उम्मत के सभी वर्गों की एक **सच्ची और साझा आशा** को अभिव्यक्त करती है—जिसका प्रतिनिधित्व इसके विद्वानों, बौद्धिक नेताओं और धार्मिक प्राधिकारियों द्वारा किया जाता है। यह पुकार इस बात की सामूहिक आकांक्षा है कि उम्मत अपने विचारधारात्मक मतभेदों और फिरक़ों की विविधता के बावजूद आपसी समझ और एकता की दिशा में आगे बढ़े, ताकि वह आज के साझा संकटों और चुनौतियों का मिलकर सामना कर सके।

यह आशा **एक ठोस पहल** के रूप में मूर्त रूप में तब सामने आई जब **अल-अज़हर के महामहिम ग्रैंड इमाम प्रोफेसर डॉ. अहमद अल-तय्यब**, जो ***मुस्लिम काउंसिल ऑफ़ एलडर्स*** **(Muslim Council of Elders)** के अध्यक्ष भी हैं, ने **नवंबर 2022 में '*बहरैन संवाद मंच*' (Bahrain Dialogue Forum)** में अपने ऐतिहासिक भाषण के दौरान **इस्लामी गुटों एवं दलों के बीच संवाद** का आह्वान किया। यह ऐतिहासिक आह्वान मुस्लिम उम्मत में आपसी संवाद की दिशा में एक दीर्घकालिक और व्यापक प्रयास की **शुरुआत का प्रतीक** बन गया।

इस पहल ने एक ऐसे **समग्र सम्मेलन की नींव रखी**, जो मुस्लिम जगत के विभिन्न क्षेत्रों से विद्वानों और धार्मिक नेतृत्व को एकत्र कर सके। यह पहल अब तक एक **स्थायी और फलदायी अंतर-इस्लामी संवाद** का मार्ग प्रशस्त कर चुकी है।

मुस्लिम काउंसिल ऑफ़ एलडर्स **के महासचिवालय** ने इस दिशा में कई **प्रमुख धार्मिक नेताओं और प्राधिकारियों से परामर्श** किए, साथ ही कई मुस्लिम देशों का दौरा कर ज़मीनी संपर्क स्थापित किया। इन प्रयासों के अंतर्गत **इराक़ की दो ऐतिहासिक यात्राएँ** विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं, जहाँ विभिन्न धार्मिक हस्तियों और संस्थाओं के साथ बैठकें की गईं।

इन यात्राओं में ग्रैंड आयतुल्ला **सैयद अली अल-सिस्तानी** के सुपुत्र के साथ मुलाक़ात शामिल थी, साथ ही **शेख अब्दुल-महदी अल-करबला'ई**, जो सुप्रीम धार्मिक प्राधिकरण के प्रतिनिधि हैं, से भी वार्ता हुई। इसके अतिरिक्त, **नजफ़, बग़दाद** और इराक़ के अन्य क्षेत्रों में **सुन्नी और शिया दोनों**

परंपराओं के कई विद्वानों और प्रतिष्ठित हस्तियों से भी संवाद स्थापित किया गया।

इसके अतिरिक्त, यह संपर्क प्रयास मुस्लिम दुनिया के विभिन्न देशों में फैले इस्लामी परंपराओं के प्रतिनिधि विद्वानों तक विस्तृत किया गया, जिनमें ईरान, लेबनान और अन्य देशों के प्रख्यात धार्मिक प्राधिकारियों और विद्वानों को भी सम्मिलित किया गया। इन सतत प्रयासों का परिणाम था अंतर-इस्लामी संवाद सम्मेलन (Intra-Islamic Dialogue Conference) का आयोजन, जिसे बहरैन साम्राज्य (Kingdom of Bahrain) ने महाराज हमद बिन ईसा अल ख़लीफ़ा के गरिमामयी संरक्षण में मेज़बानी दी।

इस ऐतिहासिक सम्मेलन में महामहिम ग्रैंड इमाम प्रोफेसर डॉ. अहमद अल-तय्यब ने शिरकत की, साथ ही मुस्लिम जगत के 400 से अधिक विद्वानों, धार्मिक प्राधिकारियों तथा बौद्धिक हस्तियों ने इसमें भाग लिया। यह सम्मेलन अल-अज़हर अल-शरीफ, बहरैन साम्राज्य की सर्वोच्च इस्लामी मामलों की परिषद, और *मुस्लिम काउंसिल ऑफ़ एलडर्स* (Muslim Council of Elders) के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित किया गया। यह सम्मेलन 20-21 शाबान 1446 हिजरी को आयोजित हुआ, जो 19-20 फरवरी 2025 की तारीखों के अनुरूप था।

सम्मेलन का समापन इस ऐलान के साथ हुआ जिसे कहा गया:"***क़िब्ला वालों की पुकार***", यह घोषणा सम्मेलन के परिणामों में परिलक्षित एकता, सौहार्द और आपसी समझ की भावना की अभिव्यक्ति है। यह घोषणापत्र पूर्व में हुए संवादों और स्वयं सम्मेलन के दौरान हुई चर्चाओं का सार है, जिसका उद्देश्य एक साझा दृष्टिकोण स्थापित करना और मुस्लिम उम्मत के सदस्यों के बीच सहयोग एवं निकटता को बढ़ावा देना है।

सलाहकार मोहम्मद अब्दुस्सलाम

महासचिव – *मुस्लिम काउंसिल ऑफ़ एलडर्स*

<u>क़िब्ला वालों की पुकार</u>

एक उम्मत, एक साझा तक़दीर

"निश्चय ही तुम्हारी यह उम्मत एक ही उम्मत है, और मैं तुम्हारा पालनहार हूँ, अतः मुझसे ही डरो"।
[क़ुरआन, सूरह अल-मु'मिनून, आयत 52]

भूमिका

इस पुकार की बुनियाद उस महान एकता में छुपी है, जो सम्पूर्ण मुस्लिम उम्मत की आत्मा और उसका सार है। वह उम्मत, जिसे उसके रब ने एक करार दिया — एक संतुलित, न्यायप्रिय और वह श्रेष्ठ उम्मत जिसे मानवता के मार्गदर्शन के लिए उतारा गया।

यही भाईचारा वह अडिग आधारशिला है जो उम्मत के विभिन्न वर्गों, समुदायों और क्षेत्रों के बीच कृपा, हमदर्दी और पारस्परिक स्नेह को मज़बूती प्रदान करती है। यह वह बुनियाद है जो समस्त अहले क़िब्ला — अर्थात सभी मुसलमानों को — एक सच्चे भाईचारे में पिरोती है।

यह भाईचारा केवल भौगोलिक समीपता या अस्थायी सामंजस्य का नाम नहीं है। बल्कि यह एक गहरे जड़े हुए, स्थायी संबंध का प्रतीक है, जो विचार, चेतना और विश्वास के एक साझा स्रोत से पोषित होता है — अल्लाह का दिव्य क़ुरआन और अंतिम नबी हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की रहनुमाई। इन्हीं दो बुनियादी स्रोतों ने उम्मत की इल्मी सोच को दिशा दी, इसके धार्मिक और न्यायशास्त्रीय स्कूलों की नींव रखी, और वह आधार प्रदान किया जिस पर इस उम्मत की सामाजिक, आर्थिक और बौद्धिक ज़िंदगी खड़ी है। यही कारण है कि यह उम्मत विभिन्न सभ्यताओं में अपनी उपस्थिति को दर्ज कराती रही है, अपने झंडों को बुलंद करती रही है, तथा दुनिया को ज्ञान, न्याय और रहमत का रास्ता दिखाती रही है।

जब हम इन स्थापित सत्यों की पुनः पुष्टि करते हैं और इनके प्रभावों पर विचार करते हैं, तो यहीं यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि यह पुकार किसी भी प्रकार से धार्मिक मतभेदों की उपेक्षा करने या उन्हें मिटाने का

प्रयास नहीं कर रही है। ये मतभेद, चाहे वे ऐतिहासिक कारणों से उत्पन्न हुए हों या स्वाभाविक रूप से विकसित हुए हों, इस आह्वान के लक्ष्यों में सम्मिलित नहीं हैं। आरंभ से ही यह बात बलपूर्वक कही जाती है कि अक़ीदा (सिद्धांत) और फ़िक़्ह (विधि शास्त्र) में विविधता एक स्वीकृत और वैध वास्तविकता है, जिसे छेड़ा नहीं जाना चाहिए।

इन विचारधारात्मक धाराओं को एक में विलीन करने, या उनकी विशिष्टताओं को मिटाकर किसी एकरूपता को लागू करने का प्रयास, न तो संभव है और न ही वांछनीय — इसलिए यह इस पुकार का उद्देश्य नहीं है।

आज "क़िब्ला वालों के नाम पुकार" जो आवाज़ बुलंद कर रही है — और जिसे इस सम्मेलन में उपस्थित प्रतिष्ठित उलमा और विचारशील नेताओं की सामूहिक सहमति प्राप्त है — वह यह है कि मुस्लिम उम्मत के प्रत्येक सदस्य को उन मूल स्तंभों को पहचानना चाहिए, जो उम्मत को उसके पुनर्जागरण और वैश्विक एवं इस्लामी मंचों पर प्रभावी उपस्थिति की ओर अग्रसर कर सकते हैं।

मुस्लिम उम्मत की एकता एक पवित्र संधि है, एक संरक्षित घोषणापत्र — जिसे न तो कभी नज़रअंदाज़ किया जा सकता है और न ही समझौते का विषय बनाया जा सकता है। यह एक ऐसी अटल सच्चाई है, जिसे न केवल दिल से स्वीकार करना चाहिए, बल्कि आचरण, कार्यपद्धति और संवाद में भी प्रकट होना चाहिए। यह एक ऐसी ऊँची इमारत होनी चाहिए, जो विविधता को समेटते हुए जातीय, नस्लीय और संप्रदायगत सीमाओं से ऊपर उठती हो। इस प्रकार कि न तो अस्थायी विवाद और न ही बाहरी चुनौतियाँ इस एकता को कमज़ोर करने या खंडित करने की अनुमति पा सकती हैं।

इस्लामी भाईचारे को बनाए रखने की पूर्वशर्तें

बहरैन में आयोजित अंत:इस्लामी संवाद सम्मेलन (Intra-Islamic Dialogue Conference) के समापन पर, गहन विचार-विमर्श और मंथन के पश्चात प्रतिभागियों ने इस्लामी एकता को बनाए रखने की निम्नलिखित अनिवार्य पूर्वशर्तों पर सर्वसम्मति व्यक्त की:

1. समस्त मुसलमानों के बीच—चाहे वे विद्वान हों या आमजन, और विशेष रूप से विद्वानों और मीडिया के स्तर पर—भाईचारे की भावना को संरक्षित

रखना तथा आपसी समझ के सेतु को सुदृढ़ बनाए रखना आवश्यक है। इस प्रक्रिया में धार्मिक मतभिन्नताओं की वैधता को स्वीकार करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह सिद्धांत हमारे समृद्ध विरासत में गहराई से समाहित है, जिसे निम्नलिखित सुनहरे नियम के रूप में संक्षेपित किया गया है:

"जिन मामलों में हम सहमत हैं, उनमें हम सहयोग करते हैं; और जिनमें मतभेद है, उनमें एक-दूसरे को माफ़ करते हैं"।

2. उम्मत के विद्वानों और इसकी शैक्षणिक संस्थाओं के बीच बौद्धिक एवं विचारधारात्मक समझ को बढ़ावा देना एक रणनीतिक आवश्यकता है। इसके लिए रचनात्मक अकादमिक संवाद को समर्थन देना, विद्वानों के सम्मेलनों के अवसरों को बढ़ाना, तथा विचारों की स्वतंत्रता एवं स्वतंत्र व्याख्या (इज्तिहाद) को प्रोत्साहित करना आवश्यक है। उपलब्ध सभी साधनों का उपयोग साझा ज्ञान को सुदृढ़ करने हेतु किया जाना चाहिए। साथ ही, विघटनकारी योजनाओं, फूट डालने वाली आवाज़ों और वैमनस्य फैलाने वाले आह्वानों से सदा सतर्क रहना चाहिए। इन खतरों को उम्मत की एकता और उसकी सभ्यतागत संरचना के लिए गंभीर जोखिम मानते हुए, एक सूझबूझ भरी रणनीतिक चेतना के साथ संबोधित करना अति अनिवार्य है।

3. मुसलमानों को एक संयुक्त उम्मत के रूप में जिन खतरों का सामना करना पड़ रहा है—चाहे वे उनके भूभागों पर सीधा आक्रमण हो या उनके पवित्र स्थलों पर लक्षित हमले—वे सब एक साझा चुनौती का रूप लेते हैं, जो समस्त मुस्लिम समुदाय को विभाजित करने और उनकी एकता व उन्नति के मार्ग को अवरुद्ध करने के लिए प्रयासरत हैं।

इन व्यापक और गहन खतरों के मद्देनज़र—धार्मिक और तार्किक दोनों दृष्टिकोणों से—यह अनिवार्य हो जाता है कि हम एक साझा शब्द और एकीकृत दृष्टिकोण पर एकजुट हों तथा उम्मत की कौमों व समुदायों के मध्य सहयोग एवं एकता को मज़बूती प्रदान करें। यही वह मार्ग है जिससे मुस्लिम भूमि सुरक्षित रह सकेगी, उनके भूभाग स्वतंत्र रहेंगे, और उनके पवित्र स्थलों तथा धार्मिक प्रतीकों की रक्षा सुनिश्चित की जा सकेगी।

4. आज यहाँ, मेज़बान देश बहरैन की इस अतिथि-स्नेही भूमि पर एकत्रित उम्मत के विद्वानों ने "क़िब्ला वालों के नाम पुकार" के इस ऐतिहासिक क्षण तक पहुँचने के लिए एक लंबा और कठिन सफ़र तय किया है। अल्लाह की

कृपा से, वे एक निर्णायक मुक़ाम पर पहुँच चुके हैं — एक ऐसा क्षण जिसके बारे में हम सच्चे दिल से दुआ करते हैं कि यह उस फूट और संघर्ष का अंत साबित हो, जिसके विरुद्ध हमारे रब ने चेतावनी दी थी:

﴿وَأَطِيعُواْ ٱللَّهَ وَرَسُولَهُۥ وَلَا تَنَٰزَعُواْ فَتَفۡشَلُواْ وَتَذۡهَبَ رِيحُكُمۡ﴾ [الأنفال: 46]

"अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करो, और आपस में झगड़ा मत करो, वरना तुम्हारा साहस टूट जाएगा और तुम्हारी शक्ति जाती रहेगी"।
(क़ुरआन, सूरह अल-अनफ़ाल, आयत 46)

विभाजन की स्थिति उस संदेश के विपरीत है जिसे हमारे महान पैग़ंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने समस्त मुसलमानों को दिया था, और यह उनके पवित्र अहले बैत (अलैहिमुस्सलाम), उनके नेक साथियों सहाबा (रज़ियल्लाहु अन्हुम), तथा इस्लाम के सभी विचार-परंपराओं के प्रतिष्ठित इमामों और प्रमुख फ़ुक़हा की शिक्षाओं के भी विपरीत है।

5. उम्मत के ये विद्वान और धार्मिक प्राधिकारी — जिनका प्रतिनिधित्व यहाँ हज़रत प्रोफेसर डॉ. अहमद अत-तय्यब, अज़हर शरीफ़ के ग्रैंड इमाम और मुस्लिम काउंसिल ऑफ एल्डर्स के अध्यक्ष, तथा उनके साथ विभिन्न इस्लामी विचारधाराओं के आलिम कर रहे हैं — इस बात से भलीभांति अवगत हैं कि उनके कंधों पर उम्मत ने कितना बड़ा भार रखा है और इन नाजुक परिस्थितियों में वे कितनी बड़ी ज़िम्मेदारी उठाए हुए हैं। वे यह दायित्व स्वीकार करते हैं कि वे उम्मत को इस्लाम के सच्चे सार की सही रूप में तालीम दें, और समस्त मुसलमानों के बीच पवित्र भाईचारे के रिश्तों को मज़बूती से थामे रखें। वे इस बात को पूरी स्पष्टता से मानते हैं कि ऐसे किसी भी प्रयास की सख़्त मनाही है जो इन रिश्तों को नुक़सान पहुँचाए या उन्हें तोड़ने का कारण बने।

6. इस सिद्धांत की पुष्टि की जाती है कि सभी मुसलमान एक संयुक्त उम्मत का हिस्सा हैं, और किसी फिरक़े या विचारधारा के प्रति निष्ठा, उम्मत के प्रति वफ़ादारी से ऊपर कभी नहीं हो सकती और न ही होनी चाहिए। यह स्वाभाविक और सम्मानजनक है कि इंसान अपनी धार्मिक पहचान के प्रति प्रेम रखे, परंतु समझदारी का तकाज़ा है कि यह भावना कभी ऐसा रूप न ले जो उम्मत की एकता के लिए खतरा बन जाए।

7. समस्त इस्लामी विचारधाराओं के विद्वानों को यह बात लगातार याद दिलाई जाती है कि वे अल्लाह के समक्ष, उम्मत के समक्ष, और इतिहास के समक्ष ज़िम्मेदार हैं। उन्हें इस पुकार में निर्धारित कर्तव्यों को निभाना है और सक्रिय रूप से "क़िब्ला वालों के नाम पुकार" में शरीक होना है — जिसका एकमात्र उद्देश्य है: समस्त मुसलमानों की भलाई, पूर्व और पश्चिम दोनों में विश्व की भलाई, तथा वैश्विक शांति एवं सदाचार की स्थापना।

इस्लामी भाईचारे के स्तंभ

यह पुकार कुछ बुनियादी सिद्धांतों पर आधारित है और उन्हीं का पालन करती है, जिन्हें निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया गया है:

• **पवित्र क़ुरआन और अंतिम पैग़ंबर — धर्म का मूल आधार हैं:** क़ुरआन उम्मत के लिए शाश्वत मार्गदर्शक ग्रंथ है, और हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) अंतिम पैग़ंबर और मुहर-ए-नुबुव्वत हैं। ये दोनों इस्लाम धर्म के स्रोत हैं—इसके विश्वास का स्रोत, हमारे दृष्टिकोण की रोशनी, ईमान की ऐतिहासिक ज़िम्मेदारी की नींव, एकीकृत क़िब्ला और स्थायी शरीअत की बुनियाद। यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि पैग़ंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का युग, जैसा कि उनकी सीरत और हदीसों में वर्णित है, मुसलमानों की एकता का एक आदर्श कालखंड था।

• **भिन्नता — एक सार्वभौमिक नियम और मानवीय यथार्थ है:** मानव समाज में विविधता एक स्वाभाविक और निर्विवाद सत्य है। यह एक ईश्वरीय आदेश, मानव प्रकृति की वास्तविक स्थिति तथा एक ऐतिहासिक व सामाजिक हक़ीक़त है — जिससे मुसलमान भी मुसतसना नहीं हैं।

• **कर्तव्यों की पूर्ति के लिए स्वतंत्रता अनिवार्य है:** अल्लाह ने इंसान को सोचने और अमल करने की आज़ादी दी है, और यही स्वतंत्रता उसकी ज़िम्मेदारी तथा उत्तरदायित्व का आधार है। जैसकि क़ुरआन खुद कहता है: **"और कह दो: 'सत्य तुम्हारे रब की ओर से है। अब जो चाहे ईमान लाए और जो चाहे इंकार करे"।** (क़ुरआन, सूरह अल-कहफ़, 18:29), इससे स्वतः स्पष्ट होता है कि अपने विचार और मतपंथ चुनने की स्वतंत्रता अत्यधिक बुनियादी एवं असंदिग्ध अधिकार है।

• **मतभिन्नता — एक ऐतिहासिक वास्तविकता:** इस्लामी उम्मत में विचारधारात्मक विविधता कोई नई बात नहीं, बल्कि यह पहले इस्लामी शताब्दी से ही मौजूद है—जब ख़िलाफ़त की वैधता को लेकर मतभेद उत्पन्न हुए। समय के साथ, ऐतिहासिक घटनाओं की भिन्न व्याख्याओं के कारण ये मतभेद स्थायी हो गए।

• **इज्तिहाद की वैधता — योग्य विद्वानों द्वारा, निर्धारित शर्तों के तहत:** इस्लामी विचारधाराओं की विविधता का मूल आधार विद्वानों द्वारा किया गया **इज्तिहाद** है— अर्थात सत्य को जानने के लिए किया गया ईमानदाराना बौद्धिक प्रयास है। यह इस्लामी सिद्धांतों और शास्त्रीय परंपराओं के अनुसार सत्य की खोज का गंभीर प्रयास है। इज्तिहाद एक गहरे शोध का क्षेत्र है, न कि टकराव का मैदान।

• **इस्लामी विचारधाराओं की विविधता — सत्य की सार्वभौमिक खोज का प्रतिबिंब:** विभिन्न इस्लामी मतधाराएँ, मूलतः, प्रमाणों के प्रति निष्ठा, उसके आदेशों का पालन, तथा धर्म की सच्ची व्याख्या की जिज्ञासु खोज का प्रतिफल हैं। यह विविधता प्रत्येक विचारधारा के विशेष उसूल तथा फिक़्ही एवं अक़ीदा परंपराओं पर आधारित है, जिन्हें व्यापक मान्यता प्राप्त है।

• **हर मत के भीतर भी मतभेद मौजूद हैं:** मतभिन्नता केवल विभिन्न विचारधाराओं के बीच नहीं, बल्कि प्रत्येक विचारधारा के अंदर भी देखने को मिलती है। कई बार किसी एक मत के अंदर का मतभेद, अन्य मतों के आपसी अंतर से भी अधिक गहरा होता है। यह सिद्ध करता है कि मतभिन्नता कोई विघटन नहीं, बल्कि एक बौद्धिक परंपरा है जो एकता को क्षीण नहीं करती, बल्कि उसे समृद्ध करती है।

• **सम्मान — केवल आपसी समझ के माध्यम से संभव है:** यह स्वाभाविक और न्यायसंगत है कि प्रत्येक विचारधारा के अनुयायी अपने विद्वानों और धार्मिक धरोहर से प्रेम रखें, जो अपने समय की विशेष सामाजिक-राजनीतिक और धार्मिक परिस्थितियों में विकसित हुई। इस विरासत के प्रति परस्पर सम्मान, और इस विविधता से न्याय, समानता और पहचान की भावना से संवाद करना—विचार की स्वतंत्रता का सम्मान करने की बुनियाद है। ये सिद्धांत शास्त्र सम्मत, तार्किक, व्यवहारिक और सर्वमान्य हैं। यह पुकार,

अल्लाह ने चाहा तो इन्हीं सिद्धांतों की सामूहिक सहमति की अभिव्यक्ति होगी।

• **मान्य इस्लामी मतपंथ — वैध विचार संस्थाएँ हैं:** अतः इनके बीच मौजूद मतभेदों को कभी भी विरोध या टकराव का कारण नहीं माना जाना चाहिए। इन मतधाराओं के आपसी संबंध सहयोग, सद्भाव, परामर्श और भाईचारे पर आधारित होने चाहिए।

• **नीय्यतें केवल अल्लाह के हवाले हैं:** सभी इस्लामी विचारधाराओं में यह सर्वसम्मत सिद्धांत है कि नीयतों का ज्ञान केवल अल्लाह रब्बुल-आलमीन के अधिकार क्षेत्र में है। प्रतिफल और दंड का निर्धारण केवल वही करता है और वही कर सकता है। कोई भी विद्वान, चाहे उसका ज्ञान या स्थान कितना भी उच्च क्यों न हो, दूसरे मत के अनुयायियों के अंजाम का फ़ैसला करने, उन्हें विवश करने, या उनके धार्मिक और वैचारिक स्वतंत्रता पर रोक लगाने का अधिकार नहीं रखता।

• **मुसलमानों को अतीत की नहीं, वर्तमान और भविष्य की चिंता करनी चाहिए:** जो लोग गुज़रे ज़माने में थे, वे अपने कर्मों का फल अपने रब के सामने पा चुके हैं—चाहे भला हो या बुरा। हमारी ज़िम्मेदारी वर्तमान परिस्थितियों का सामना करना और भविष्य का निर्माण करना है, न कि पूर्वजों के कार्यों पर उलझे रहना। जैसा कि क़ुरआन में स्पष्ट कहा गया है:

﴿تِلْكَ أُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُم مَا كَسَبْتُمْ وَلَا تُسْأَلُونَ عَمَّا كَانُوا يَعْمَلُونَ﴾ [البقرة: 134].

अर्थात: "वे एक समुदाय के लोग थे गुज़र गए। उनके लिए वह है जो उन्होंने कमाया, और तुम्हारे लिए वह है जो तुम कमाओगे। तुमसे यह नहीं पूछा जाएगा कि उन्होंने क्या किया"। (क़ुरआन, सूरह अल-बक़रह, 2:134)

• **हिकमत और आज की चुनौतियाँ यह माँग करती हैं कि अतीत के संघर्षों और विभाजनों को एकता और प्रगति की प्रेरणा देने वाले पाठों में बदला जाए।** उम्मत को अपने वर्तमान और भविष्य की बारीक एवं ईमानदार समीक्षा करते हुए एक नई सोच अपनानी चाहिए।

• **संवाद — एक इस्लामी गुण है जो क़ुरआन द्वारा स्थापित है:** क़ुरआन संवाद के सिद्धांतों को उजागर करता है और उसे हिकमत, उत्तम उपदेश

और सबसे सुंदर तरीक़े से बातचीत की ओर मार्गदर्शन करता है। उम्मत के भीतर संवाद तो और भी ज़्यादा अनिवार्य, महत्वपूर्ण एवं फ़र्ज़ है।

• **यहाँ जिस संवाद की बात की जा रही है, वह आत्मसंवाद है —** ऐसा संवाद जो ईमानदारी, आत्मावलोकन, आत्म-समीक्षा और सच्चे आत्म-निरीक्षण पर आधारित हो। सन 2022 में बहरैन में आयोजित ऐतिहासिक अंतईस्लामी संवाद में अल-अजहर ने ज़ोर दिया कि *"इस संवाद के सिद्धांतों में पारस्परिक घृणा, उकसाने वाली भाषणबाज़ी, और तक़्फ़ीर (किसी को काफ़िर कहने) आदि जैसे आरोपों को समाप्त करना आदि शामिल होना चाहिए, अतीत तथा वर्तमान के सभी संघर्षों व उनके नकारात्मक प्रभावों से ऊपर उठना ज़रूरी है"*।

इसी प्रकार, इराक़ के उच्चतम शिया धार्मिक नेतृत्व द्वारा जारी एक ऐतिहासिक वक्तव्य में कहा गया:
" हम सभी सुन्नी हैं"। यह घोषणा, और अन्य प्रतिष्ठित धार्मिक व विद्वत संस्थाओं से आए इसी प्रकार के वक्तव्य, उम्मत की एकता, परस्पर सम्मान एवं सामूहिक भलाई की सच्ची प्रतिबद्धता को दर्शाते हैं।

यह पुकार यह भी दोहराती है कि **"हम सभी मुसलमान, एक इकाई और एक दूजे के अंश हैं"।** जैसा कि अल्लाह फ़रमाता है:

﴿فَسَلِّمُوا عَلَى أَنْفُسِكُمْ﴾ [النور:61]،

"तो स्वयं (तुम एक-दूसरे) को सलाम करो।" (क़ुरआन, 24:61)

अर्थात हर मुसलमान उम्मत की एकीकृत देह का एक अविभाज्य हिस्सा है, जो इसकी समस्त विचारधाराओं और धार्मिक परंपराओं को समाहित करता है।

• **संवाद की बुनियाद उन साझा सिद्धांतों पर आधारित है, जो विभिन्न विचारधाराओं को एकजुट करते हैं:** ये सिद्धांत इस बात को स्वीकार करते हैं कि क़ुरआन एवं सुन्नत की समझ और पवित्र क़ुरआन की व्याख्या में कुछ हद तक विविधता स्वाभाविक है, बशर्ते वह पवित्र क़ुरआन, अंतिम पैगंबर की सर्वमान्य सुन्नत, और सलफ़े -सालेहीन (अहले बैत, सहाबा और प्रमुख इमामों) के मार्गदर्शन के दायरे में हो। ज़रूरी है कि यह **सिद्धांत** स्पष्ट अरबी

भाषा में आई वह्य की व्याख्या में संतुलन बनाए रखने आधारित हो, अतिवाद या विकृति से मुक्त हो, तथा धर्म के स्थापित उद्देश्यों के अनुरूप हो।

इन सिद्धांतों के आधार पर, हमें उस सोच से बाहर आना होगा जो मतभेद रखने वालों को अलग करती है, तथा उस सांस्कृतिक ढांचे की ओर बढ़ना होगा जो विविधता को अपनाता है। इसके लिए ज़रूरी है कि हम बहुलता के शिष्टाचार एवं क़ुरआनिक संवाद के उच्च नैतिक मानकों का पालन करें।

• **किसी भी इस्लामी विचारधारा के पूज्य व्यक्तित्वों के प्रति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष अपमान को तुरंत और पूर्ण रूप से समाप्त किया जाना चाहिए:** यह उस क़ुरआनिक चेतावनी के अनुरूप है जिसमें अल्लाह ने फ़रमाया है:

﴿وَلَا تَسُبُّوا الَّذِينَ يَدْعُونَ مِن دُونِ اللَّهِ فَيَسُبُّوا اللَّهَ عَدْوًا بِغَيْرِ عِلْمٍ﴾ [الأنعام: 108]

अर्थात: [हे ईमानवालों!] वे (मुश्रिक) अल्लाह के सिवा जिन्हें पुकारते हैं, उन्हें गाली न दो, वरना वे अज्ञानता में उल्टा अल्लाह को गाली देंने लगेंगे। (क़ुरआन, सूरह अल-अनआम, 6:108)

यह नैतिक सिद्धांत पैग़ंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सुन्नत में लगातार देखा गया है, और उनके अहले बैत व सहाबा की व्यवहारिक परंपरा में भी—ख़ास तौर पर अमीरुल मोमिनीन अली इब्न अबी तालिब (र.अ.) के उदाहरण में, जिन्होंने अपने अनुयायियों को शामी मुसलमानों को गाली देने से रोका, भले ही वे युद्ध की स्थिति में हों। उन्होंने यहां तक कहा: **"वे हमारे भाई हैं, जिन्होंने हम पर ज़्यादती की है"।**

• **किसी भी मुसलमान के विरुद्ध किसी प्रकार की क्षति पहुँचाना—चाहे वह उसकी विचारधारा, नस्ल, भाषा, राष्ट्रीयता, मत, ऐतिहासिक दृष्टिकोण अथवा शास्त्रीय व्याख्या के कारण हो—इस्लामी विचारधाराओं की सर्वसम्मति से पूरी तरह निषिद्ध एवं वर्जित है।** यदि ऐसा आचरण वर्जित है, तो कल्पना कीजिए कि हत्या, जबरन विस्थापन, और लोगों के जीवन, संपत्ति और प्रतिष्ठित अधिकारों के विरुद्ध होने वाले अत्याचार जैसे गंभीर अपराध कितने अधिक निंदनीय होंगे?

पैग़ंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने एक अत्यंत प्रामाणिक हदीस में, जिसे सभी इस्लामी विचारधाराओं ने स्वीकार किया है, सभी मुसलमानों को आदेश देते हुए कहा:

«لا تحاسَدُوا، ولا تناجَشُوا، ولا تباغَضُوا، ولا تدابَرُوا، ولا يَبِعْ بعضُكمْ على بيعِ بعضٍ، وكُونُوا عبادَ اللهِ إخوانًا، المسلِمُ أخُو المسلِمِ، لا يَظلِمُهُ ولا يَخذُلُهُ، ولا يَحقِرُهُ. كلُّ المسلِمِ على المسلِمِ حرامٌ: دمُهُ، ومالُهُ، وعِرضُهُ»

"एक-दूसरे से ईर्ष्या मत करो, कृत्रिम रूप से कीमतें मत बढ़ाओ, एक-दूसरे से द्वेष मत रखो, एक-दूसरे से मुँह मत मोड़ो, और व्यापार में एक-दूसरे को नुकसान न पहुँचाओ। अल्लाह के बंदे बनो—भाइयों की तरह। एक मुसलमान दूसरे मुसलमान का भाई है: वह न उस पर ज़ुल्म करता है, न उसे तुच्छ समझता है। एक मुसलमान का सम्पूर्ण अस्तित्व दूसरे मुसलमान के लिए पवित्र है—उसका जीवन, उसकी संपत्ति और उसकी प्रतिष्ठा"। (हदीस)

• किसी एक इस्लामी विचारधारा के अनुयायियों को दूसरी विचारधारा में परिवर्तित करने के प्रयास—चाहे वह आर्थिक प्रलोभनों, मिशनरी गतिविधियों, या संस्थागत योजनाओं के माध्यम से हो—उम्मत के लिए किसी प्रकार का लाभ नहीं लाते।

बल्कि इसके विपरीत, ये प्रयास फूट को बढ़ावा देते हैं, मुस्लिम समाजों के भीतर आंतरिक संघर्षों को भड़काते हैं, और अंततः केवल इस्लाम के दुश्मनों की सेवा करते हैं।

ऐसे प्रयासों में लगे लोगों को आत्मचिंतन करना चाहिए—**एक व्यक्ति या समुदाय के विचारधारा-परिवर्तन से कौन-सा वास्तविक लाभ या सामूहिक भलाई प्राप्त होती है? उस विचारधारा को क्या ठोस लाभ मिलता है जिसमें वे परिवर्तित किए जाते हैं? और किसी ऐतिहासिक रूप से स्थिर मुस्लिम समाज, या उस राष्ट्र में जहाँ एक विशिष्ट विचारधारा सामाजिक एकता और व्यवस्था की बुनियाद रही हो—वहाँ एक नई पंथीय शाखा का प्रवेश किन दुष्परिणामों को जन्म देता है?**

इस प्रकार की गतिविधियाँ न केवल मुसलमानों के बीच तनाव और विघटन का कारण बनती हैं, बल्कि इनका कोई व्यावहारिक लाभ भी नहीं होता। ये

उम्मत की धार्मिक संरचना, इसकी गहरी जड़ें जमा चुकी पंथीय वास्तविकताओं, या सामाजिक व धार्मिक जीवन में कोई सार्थक परिवर्तन नहीं ला सकतीं।

• **क़ुरआन के व्यापक आह्वान के अनुरूप अन्य धर्मों के साथ संवाद और आपसी समझ के प्रयासों से पहले, यह अत्यंत आवश्यक है कि विभिन्न इस्लामी विचारधाराओं के बीच आपसी समझ और सहिष्णुता को प्राथमिकता दी जाए।** मनःस्थितिगत अवरोधों को हटाना और एक-दूसरे के प्रति व्याप्त भ्रांतियों व पूर्वाग्रहों को समाप्त करना केवल प्रत्यक्ष संवाद और आपसी अध्ययन द्वारा ही संभव है—प्रत्येक विचारधारा के मान्य विद्वानों के ज्ञान और योगदान को समझकर, उनके ग्रंथों और शिक्षाओं को इस्लामी शिक्षा पद्धति और धार्मिक संस्थानों के पाठ्यक्रमों में सम्मिलित कर।

किन्तु यह धार्मिक और बौद्धिक रूप से अनिवार्य कार्य उन मिशनरी प्रयासों से बाधित होता है जो कुछ विशिष्ट विचारों को उन समाजों में फैलाने का प्रयास करते हैं जहाँ उनका कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है। ऐसे प्रयास उन ईमानदार विद्वानों के मार्ग में अवरोध बनते हैं जो उम्मत के भीतर आपसी समझ एवं सहयोग को बढ़ावा देने हेतु प्रयत्नशील हैं।

• **हम यह मानते हैं कि कुछ व्यक्तियों द्वारा किए गए ग़लत व्यवहार या अनुचित टिप्पणियाँ किसी भी विचारधारा या उसके प्रामाणिक विद्वानों का सच्चा प्रतिनिधित्व नहीं करतीं।**

इसके अतिरिक्त, कुछ उपदेशकों, वक्ताओं और धार्मिक हस्तियों—जो उम्मत की विविध संरचना, ऐतिहासिक विकास एवं समकालीन वास्तविकताओं की समझ नहीं रखते—के कार्य और वक्तव्य प्रायः त्वरित, पक्षपातपूर्ण और अतिरंजित निष्कर्षों को जन्म देते हैं। इस प्रकार की ग़लत धारणाएँ और निर्णय मुस्लिम उम्मत की एकता, समरसता और दीर्घकालीन स्थायित्व के लिए गंभीर ख़तरा हैं।

इस्लामी भाईचारे की प्राप्ति हेतु सिद्धांत और मूल्य

पूर्ववर्ती विचारों और आधारभूत सिद्धांतों के आलोक में, **"अहले-क़िब्ला की पुकार"** इस बात पर ज़ोर देती है कि एकजुट उम्मत की सच्ची आत्मा को पुनर्जीवित करने और अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कुछ व्यापक

सिद्धांतों, मूल्यों एवं अनिवार्य कर्तव्यों का पालन अत्यंत आवश्यक है। हम ईमानदारी के साथ तहे दिल से समस्त मुसलमानों से आह्वान करते हैं कि वे निम्नलिखित इन बातों को अपनाएँ:

पहला: समझ और सहयोग की भावना को प्रोत्साहित करना: सभी मुसलमानों के बीच धार्मिक भाईचारे की स्थापना का प्रयास प्रत्येक मुसलमान का कर्तव्य है—चाहे वह किसी भी विचारधारा से संबंधित हो। इसके लिए आवश्यक है कि वह आस्था-आधारित भाईचारे के उस मूल सिद्धांत से दृढ़तापूर्वक जुड़ा रहे, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए उम्मत की एकता को मज़बूत करता है।

दूसरा: इस्लामी भाषण और संवाद का नवीनीकरण, जिससे फिरकापरस्ती समाप्त हो: धार्मिक भाषण और विचारधारा में सुधार अत्यावश्यक है, जिससे मुसलमानों के बीच विभाजन और कट्टरपंथी स्वर निष्क्रिय किए जा सकें—वे स्वर जो तक़्फ़ीर (अर्थात दूसरों को इस्लाम से बाहर घोषित करने), शत्रुता, अपमान और हानि को बढ़ावा देते हैं। ऐसे लोग, जान-बूझकर या अनजाने में, उम्मत की एकता को तोड़ते हैं और आंतरिक विभाजन को भड़काते हैं।

धार्मिक संवाद का यह नवीनीकरण उम्मत के एकीकरणकारी सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिए, विशेष रूप से शुद्ध तौहीद (अल्लाह की एकता में किसी को साझी न बनाना)—जो इस्लामी विश्वास की नींव है और उम्मत की एकता की आवश्यकता का मुख्य कारण भी। कहा गया है कि इस्लाम दो मूल सिद्धांतों में समाहित है: **तौहीदे इलाही अर्थात इबादत में अल्लाह की एकता** और **तौहीदे कलिमा (अर्थात उम्मत की एकता)।**

साथ ही, इस्लामी संवाद को निम्न बातों पर केंद्रित होना चाहिए: आत्मा की पवित्रता ताकि वह ईश्वरीय अमानत को निभा सके, मानव कल्याण और सभ्यता के विकास का समर्थन, सामाजिक न्याय की स्थापना—चाहे वह उम्मत के भीतर हो या वैश्विक स्तर पर

तीसरा: नफ़रत और वैमनस्य की संस्कृति को समाप्त करना: आज के समय की एक अत्यावश्यक आवश्यकता यह है कि धार्मिक, शैक्षणिक, बौद्धिक और मीडिया क्षेत्र की प्रबुद्ध हस्तियाँ मिलकर मुसलमानों के बीच फैल रही घृणा और वैमनस्य की संस्कृति को समाप्त करें। यह विषैली

मानसिकता उम्मत में अनेक आपदाओं और स्थायी त्रासदियों का कारण बनी है, जिनके प्रभाव आज भी लोगों के मन-मस्तिष्क में जीवित हैं।

चौथा: आत्मालोचना और पुनर्मूल्यांकन का साहस: कोई भी इस्लामी विचारधारा ऐसी नहीं है जो व्याख्यात्मक त्रुटियों या ऐसे फ़िक़्ही फ़ैसलों से मुक्त हो, जो किसी विद्वान की समझ पर आधारित हों पर आज के समय के लिए अनुपयुक्त सिद्ध हो रहे हों। इन मामलों से निपटने के लिए ज़रूरी है कि विद्वान आत्मालोचना करें, गलतियों को स्वीकारें—गरचे वे किसी प्रतिष्ठित विद्वान की राय से संबंधित हों— तथा यह मानें कि **सत्य का पालन किसी व्यक्ति या परंपरा के प्रति निष्ठा से अधिक आवश्यक है।**

साथ ही विद्वानों को उन रायों के व्यक्ति-आधारित पूजन से बचना चाहिए, जिन्हें समय के साथ अनावश्यक रूप से पवित्र बना दिया गया है। यह प्रवृत्ति आलोचनात्मक चिंतन और विचार-मंथन की राह में बाधा बनती है। इसके विपरीत, विभिन्न इस्लामी परंपराओं के बीच हो चुके संवाद और विद्वत-चिंतन को आगे बढ़ाने की ज़रूरत है।

इस दिशा में वास्तविक खुलापन और ईमानदार संवाद अत्यंत आवश्यक है। अल-अज़हर विश्वविद्यालय इसका जीवंत उदाहरण है, जहाँ अब तक सभी आठ प्रमुख फ़िक़्ही विचारधाराओं को पढ़ाया जाता है। इसी तरह क़ुम और नजफ़ के हौज़ों में सुन्नी विचारधाराओं को भी स्थान दिया गया है, जबकि ओमान, यमन और अन्य क्षेत्रों की संस्थाएँ विभिन्न परंपराओं को समाविष्ट करती रही हैं।

पाँचवाँ: खुला संवाद और पारस्परिक समझ—एकजुटता की कुंजी है: मुस्लिम विद्वानों और बौद्धिक वर्ग की खुले संवाद की तत्परता तथा आपसी समझ बढ़ाने की इच्छा ही आज मुस्लिम जनमत को प्रभावित करने का सबसे प्रभावी माध्यम है। उम्मत को आज ऐसे संवाद की आवश्यकता है जो समकालीन चुनौतियों, साझा उद्देश्यों और मुस्लिम समाज के वर्तमान व भविष्य की भलाई पर केंद्रित हो।

यह संवाद तभी प्रभावी होगा जब:

उसमें विविध इस्लामी विचारधाराओं की वास्तविक जानकारी शामिल हो

दूसरों की राय को ईमानदारी से प्रस्तुत किया जाए

निर्णय निष्पक्ष और सत्यपरक हों

साथ ही, **सामूहिक इज्तिहाद की संस्कृति** को इस्लामी अनुसंधान संस्थानों और फ़तवा परिषदों के माध्यम से प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, जिससे समकालीन सार्वजनिक मामलों पर सर्वसम्मत समाधान प्रस्तुत किए जा सकें।

छठा: उम्मत को आज जिस संवाद की आवश्यकता है, वह किसी संकीर्ण **फिरक़ावाराना बहस** का रूप नहीं होना चाहिए, जो मुस्लिम पहचान को फिर से परिभाषित करने या लंबे समय से स्थापित मान्यताओं को मिटाने का प्रयास करे। बल्कि यह संवाद एक **तार्किक एवं रचनात्मक** बातचीत होनी चाहिए, जिसका उद्देश्य इस्लामी विचारधाराओं के बीच मौजूद व्यापक साझा मूल्यों और बिंदुओं को उजागर करना हो—ऐसे साझा तत्व जो उम्मत की एकता को पुनः पुष्ट करते हैं और समकालीन चुनौतियों से निपटने के लिए व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत करते हैं।

इस संदर्भ में, धार्मिक संस्थाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है—विशेषकर उन मामलों में, जहाँ फिरक़ों और विचारधाराओं के बीच मतभेदों पर *उत्तरदायी और एकजुट करने वाले फ़तवे* जारी किए जाएँ, जो उम्मत को विभाजित करने के बजाय उसकी एकता को सशक्त करें। इसके लिए आवश्यक है कि विभिन्न मतों के प्रति **पारस्परिक सम्मान** बना रहे, ताकि वैचारिक विविधता और फ़िक़्ही व्याख्या में भिन्नता को सम्मानपूर्वक स्वीकार किया जा सके।

हर मुसलमान को संवाद के शिष्टाचार का पालन करना चाहिए—जिसमें सभी इस्लामी परंपराओं के आदरणीय व्यक्तित्वों और धार्मिक प्रतीकों के प्रति सम्मान दिखाना तथा विद्वानों के मतभेदों पर अपमानजनक टिप्पणियों से परहेज़ करना शामिल है।

सातवाँ: प्रमुख इस्लामी शैक्षणिक संस्थानों को चाहिए कि वे एक **व्यापक अनुसंधान परियोजना** आरंभ करें, जो इस्लामी मतों के बीच **सिद्धांतों, विधिक नियमों और नैतिक मूल्यों** पर मौजूद *सर्वसम्मति* को प्रलेखित करे। ये साझा सिद्धांत, जो दैवीय मार्गदर्शन और इस्लामी बौद्धिक विरासत में गहराई से निहित हैं, उम्मत की सामूहिक पहचान की नींव हैं।

यह परियोजना एक "***इस्लामी एकता विश्वकोश (Encyclopedia of Islamic Unity)***" के रूप में तैयार की जानी चाहिए, जिसमें सुन्नी, शिया, इबाज़ी और ज़ैदी परंपराओं के वरिष्ठ विद्वानों को शामिल किया जाए। इस प्रकार का प्रयास उम्मत की आत्मचेतना को प्रबल करेगा, पारस्परिक समझ को बढ़ाएगा, बौद्धिक और सांस्कृतिक समृद्धि को सुदृढ़ करेगा, तथा इस्लाम की वैश्विक एकीकृत आवाज़ को सशक्त बनाएगा।

आठवाँ: उम्मत के विद्वानों और धार्मिक नेताओं के लिए यह अनिवार्य है कि वे इस बात पर स्पष्ट और दृढ़ रुख अपनाएँ कि **मुसलमानों की असुरक्षाओं का लाभ उठाकर**—चाहे वह आर्थिक प्रलोभन, दबाव या ग़लत सूचना के माध्यम से हो—उन्हें किसी अन्य फिरक़े या विचारधारा की ओर ले जाना, अत्यंत हानिकारक और विभाजनकारी कृत्य है। ऐसे प्रयास उम्मत में मतभेद, अविश्वास और संघर्ष को जन्म देते हैं।

नवाँ: इस्लामी संदेश और संवाद को **राजनीतिक उद्देश्यों** और **राष्ट्रवादी दबावों** से सुरक्षित रखना अति आवश्यक है। राजनीतिक प्रतिस्पर्धा और टकराव के चलते कुछ व्यक्तियों और समूहों ने अल्पकालिक लाभों के लिए धार्मिक सिद्धांतों को विकृत किया है—यहाँ तक कि इस्लामी शिक्षाओं को भी राजनीतिक एजेंडे के अनुरूप तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत किया है।

इसके अतिरिक्त, चाहे वह जीवित व्यक्ति हों या दिवंगत, किसी के प्रति **उकसाने वाली और विभाजनकारी भाषा** को पूर्णतः अस्वीकार किया जाना चाहिए।

इस संबंध में, **मीडिया संस्थान, पत्रकार, और डिजिटल मंच** अल्लाह, उम्मत और अपनी व्यापक दर्शक संख्या के समक्ष गहरी **नैतिक ज़िम्मेदारी** रखते हैं। उन्हें विशेष रूप से मुसलमानों के बीच तनाव बढ़ाने से बचना चाहिए—चाहे अतीत में उन्होंने इस विभाजन को कितना भी बढ़ाया हो।

दसवाँ: यह पुकार उम्मत के सभी घटकों के लिए है—चाहे वे किसी भी फिरके, विचारधारा या धार्मिक नेतृत्व से जुड़े हों। हम सबको चाहिए कि इस पुकार के सिद्धांतों को अपनाएँ, इसके मूल्यों को आत्मसात करें, और इन्हें कार्यान्वित करने में सहयोग करें।

अंतिम शब्द: मौजूदा परिस्थितियों के बावजूद, उम्मत की वर्तमान स्थिति से हताश होने का कोई कारण नहीं है। अल्लाह के मार्गदर्शन से, उम्मत आज भी एकता प्राप्त करने और फिर से उभरने की **पूर्ण सामर्थ्य** रखती है—जैसे वह अपने समृद्ध इतिहास में कई बार कर चुकी है।

अल्लाह की इच्छा, और उम्मत के विद्वानों, धार्मिक नेतृत्व एवं सच्चे बौद्धिक मार्गदर्शकों के समर्पण के साथ, उम्मत हर युग में अपने *सभ्यतामूलक उत्तरदायित्व* को पुनः प्राप्त कर सकती है और मानवता के लिए अपने **दैवीय मिशन** को पूर्ण कर सकती है।

अल्लाह तआला हमें सफलता प्रदान करे और सीधा मार्ग दिखाए। वही हमारी शक्ति का स्रोत है और हम उसी पर भरोसा करते हैं। निःसंदेह, वही सबसे अच्छा सहायक और इस महान प्रयास का सर्वोच्च संरक्षक है।